

भारतीय संघवाद: वर्तमान संदर्भ में एक अध्ययन

Kapil Dev*

M.A, M.Phil, Net

शोध आलेख सार: संघवाद शब्द का प्रयोग समयानुसार भिन्न-भिन्न सन्दर्भों में किया गया है। शाब्दिक व वैचारिक प्रयोग ने इसके अर्थ को विकृत कर दिया। लोकतंत्र की भांति भिन्न-भिन्न लोगों ने संघवाद का भी भिन्न-भिन्न अर्थ लगाया। सिद्धान्त रूप में संघवाद राज्यों का वह संगठनात्मक स्वरूप है जिसमें किसी समाज में राष्ट्रीय एकता तथा क्षेत्रीय स्वायत्ता के बीच एक संतुलन स्थापित किया जाता है। यह एक प्रक्रिया है जिसमें कुछ स्वतंत्र राजनीतिक इकाईयां एक ऐसा प्रबंधन नीतियां बनाकर और संयुक्त निर्णय करके उसका समाधान कर सकें। दूसरे शब्दों में संघवाद सांझों राष्ट्रीय उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु एक संवैधानिक यंत्र है जिसमें देश की संकेदत्क व विभाजक प्रवृत्तियों की विपरीत शक्तियों को समेकित करके विभिन्नता में एकता सुनिश्चित की जाती है। भारत की भौगोलिक व सामाजिक सांस्कृतिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए भारतीय संविधान निर्माताओं ने भारत के लिए संघीय संविधान का निर्माण किया है। उस संघीय संविधान के अनुसार जिस राजनीतिक व्यवस्था की स्थापना की गयी उसे राजनीतिक व्यवस्था प्रणाली के सात दशक बीत चुके हैं लेकिन इन 70 वर्षों में संघीय प्रणाली का स्वरूप समान नहीं दिखाई देता है इस बात को ध्यान में रखते हुए भारत में विश्व पटल व आन्तरिक तौर पर व्यापक परिवर्तन महसूस किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में राज्य व केंद्र के मध्य संबंधों पर प्रकाश डालेंगे।

मुख्य शब्द: संघवाद, नीति आयोग, वित्तीय, आयोग, योजना आयोग जी.एस.टी. केन्द्रीयकरण, विकेन्द्रीयकरण, भूमण्डलीकरण, उदारीकरण क्षेत्रवाद, अलगाववाद, नक्सलवाद, धारा 356, सहकारी संघवाद, अर्द्ध संघवाद, आदर्श संघवाद, गठबंधन सरकार

शोध प्रविधि - इस शोध पत्र के लिए द्वितीयक स्रोतों से तथ्यों से लिया गया है इसमें ऐतिहासिक विश्लेषणात्मक, वर्णनात्मक व विवरणात्मक विधियों के साथ-साथ शोधार्थी ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों को भी स्थान दिया है

शोध सामग्री:- पूर्व में प्रकाशित प्रतिवेदनों, पत्र पत्रिकाओं, समाचार पत्रों विभिन्न लेखकों द्वारा इस विषय पर लिखी पुस्तकों से शोध सामग्री ग्रहण की गई है।

प्रमुख बिन्दु:-

- भारतीय संघ का स्वरूप संघात्मक या एकात्मक।
- संघ व राज्य के मध्य विवाद के बिंदु।
- नीति आयोग की आवश्यकता व स्थापना।
- योजना आयोग को निरस्त किया जाना।
- वित्तीय आयोग की भूमिका व संविधानिक संस्था।

-----X-----

परिचय:-

आज के राजनीतिक विवादों को देखे तो सवाल उठता है की भारतीय संविधान कितना संघात्मक है और कितना एकात्मक

है 'भारतीय संविधान के स्वरूप के विषय में पर्याप्त मतभेद है। इस सब में विभिन्न विरोधी मत व्यक्त किया गया है। प्रो. वेयर का कहना है, "भारतीय का संविधान उसी शासन-

व्यवस्था को जन्म देता है जो अधिक से अधिक अर्द्धसंघीय है।” डी.डी. बसु के शब्दों में “भारतीय संविधान ने तो पूर्वतः संघात्मक है न एकात्मक यह दोनों का सम्मिश्रण है। यह नवीन प्रकार का संघ है।” जी.एन. जोशी का विचार है, “भारत संघ नहीं अपितु अर्द्धसंघ है। जिसमें एकात्मक राज्य की कतिपय महत्वपूर्ण विशेषताओं का समावेश है। डा. देशमुख ने कहा था “भारतीय संघ ने तो संघात्मक है, न एकात्मक। एक सदस्य ने कहा था। यह 75 प्रतिशत एकात्मक तथा 25 प्रतिशत संघात्मक है।” इस प्रकार, भारतीय संघ के स्वरूप पर विद्वानों में पर्याप्त मतभेद है। लेकिन, सच पूछा जाए जो मूलतः इसका स्वरूप संघात्मक है, भले ही अमेरिकी संघ की भाँति इसे “आर्द्धसंघ नहीं कहा जा सकता है। इसका विश्लेषण इतिहास, संविधान और आर्थिक वास्तविकताओं को समझने से हो सकेगा। सहकारी संघवाद एक इस प्रकार का परिचय देता है। जिसमें राष्ट्रीय और राज्य सरकारें साझा समस्याओं को सुलझाने के लिए एक दूसरे का सहयोग करती हैं। इसको सफलता पूर्वक चलाने के लिए शक्तियों का एक संघीय संतुलन निर्मित करना आवश्यक है। एकता से शक्ति, मतभेद से बिखराव सदा स्मरण रहना चाहिए। “भारतीय संविधान में एक संघात्मक व्यवस्था की स्थापना की गई है। यह एक द्वैध शासन की स्थापना करता है जिससे केन्द्र में संघ सरकार तथा उसके चारों ओर परिधि में राज्य सरकारें हैं संविधान से उन्हें निश्चित पृथक्-पृथक् क्षेत्रों में शक्तियाँ प्राप्त हैं अपने अपने क्षेत्रों में वे एक दूसरे के अधीन नहीं हैं दोनों की सत्ता में परस्पर समन्वय है। भारत राज्य में संघ तथा राज्यों के सम्बंधों की विवेचना करते समय इस तथ्य को ध्यान में रखना चाहिए कि दोनों प्रकार की सरकारों का पृथक्-पृथक् अस्तित्व है, जिसे वे संविधान से प्राप्त करते हैं। इस हेतु संविधान द्वारा संघ तथा राज्यों के बीच शासन शक्तियों का वितरण किया जाता है साधारणः एक सरकार दूसरी सरकार के क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं कर सकती है। संविधान द्वारा निर्धारित सीमा-रेखा का उल्लंघन असंवैधानिक होगा। डॉ. अम्बेडकर ने संविधान सभा में इस तथ्य की व्याख्या इन शब्दों में की: “संघात्मक सरकार का मुख्य लक्षण संविधान द्वारा विधार्थी तथा कार्यपालिका संता का केन्द्र तथा एककों में वितरण करना है। उस सिद्धान्त का हमारे संविधान ने अनुसरण किया है। संविधान द्वारा संघ तथा राज्यों के बीच अधिकारों का वितरण संघीय व्यवस्था का एक मौलिक तत्व है। इसके लिए मुख्यतः दो विस्तृत प्रणालियाँ अपनायी जाती हैं प्रथम, केन्द्रीय सरकार की शक्तियाँ इकाइयों को मिल जाती हैं, अमेरिका आस्ट्रेलिया और स्वीट्जरलैंड में इस पद्धति का अपना गया है। द्वितीय, संविधान में राज्यों की शक्तियों को लिपिबद्ध कर दिया जाता है और अवशिष्ट शक्तियाँ केन्द्र को सुपुर्द कर दी जाती हैं यह पद्धति कनाडा और

भारत में पायी जाती है। प्रथम पद्धति का उद्देश्य राज्य को शक्तिशाली बनाना है और द्वितीय पद्धति केन्द्र को शक्तिशाली बनाना है।

भारतीय संविधान में तीन सूचियाँ का उल्लेख किया गया है - संघ सूची, राज्य सूची तथा समवर्ती सूची अवशिष्ट शक्तियाँ केन्द्र को सौंपी गयी हैं। संघ सूची पर भारतीय संसद, राज्य सूची पर राज्य विधानमण्डलों तथा समवर्ती सूची पर दोनों को विधि निर्माण का अधिकार प्राप्त है।

भारत के संविधान में 1935 ई. के अधिनियम की योजना को ही थोड़ा बहुत हेर-फेर कर अपना लिया गया। दोनों संविधानों में शक्तियों का विभाजन अत्यधिक समानता है। श्री निवासन् के शब्दों में, “संघ तथा राज्यों में विधायी सत्ता का विभाजन दोनों संविधानों में राज्य की स्थिति लगभग एक ही है।”

भारत जैसे विशाल और विविधता वाले देश में लचीलापान और दृढ़ता दोनों ही एक साथ आवश्यक है। आधुनिक गणतन्त्र के जन्म से ही एक मजबूत केन्द्र की आवश्यकता थी; लेकिन भारत की विशालकाया के चलते लचीलापन जरूरी है और विकेन्द्रीयकरण अनिवार्य है जैसा नीति आयोग के निर्माण से देखा गया लेकिन अब लगातार नीति आयोग के द्वारा राज्यों से बातचीत के माध्यम से केन्द्रीय सरकार व राज्य सरकार के मध्य सभी क्षेत्रों में पहले से ज्यादा राज्य सरकारों को प्राथमिकता दी जा रही है। सबका कहना है कि एक स्पष्ट रूप से परिभाषित रूपरेखा नहीं होती तो परस्पर टकराव होगा, संविधान ही वह रूप रेखा है। एक शक्ति संपन्न मध्यस्थ के रूप में सर्वोच्च न्यायालय नामक प्रहरी है जो जटिल संघीय विवादों के निराकरण में सहायता करता है और संविधान के अतिक्रमण से रोकता है भारतीय संविधान की महत्वपूर्ण विशेषता है जो अमेरिका की दोहरी न्यायापालिका से अलग एकहरी न्यायापालिका कि व्यवस्था प्रदान करता है, भारतीय संघवाद यानि राज्य व संघ से सम्बंधित सर्वोच्च व अतिन्म फैसले का अधिकार भारतीय शीर्ष न्यायालय के पास है लेकिन समाज में परिवर्तन प्राकृतिक नियम है तो उसी के हिसाब से जो समाज में परिवर्तन आता है तो भारतीय संघ में भी कुछ नयी प्रवर्तिया देखी जा सकती है जब संविधान निर्मात्री सभा ने संघ राज्य का निर्माण किया उस समय से अब तक 70 वर्षों में हम अपने संघ में कुछ नए परिवर्तन देख सकते हैं तथा राज्यों द्वारा भी बार-बार संघ सरकार से जनता के कल्याण के लिए, संघ सरकार से संविधान में संशोधन कर राज्य अधिक स्वायत्तता की मांग रखी है जिसको केन्द्र सरकार ने राष्ट्र की एकता व अखण्डता को खतरा पैदा करने वाली शब्दावली के रूप में परिभाषित किया

गया था। और सरकार ने राज्यों को अधिक शक्तियों का विकेन्द्रीयकरण करने के लिए, एक सरकारी आयोग का गठन किया गया था। जो विकेन्द्रीयकरण, केन्द्रीयकरण पर सरकार को अपनी रिपोर्ट देगा।

1991 से हुए आर्थिक उदारीकरण ने केन्द्र सरकार का महत्व बढ़ा दिया। जैसे-2 अंतर-राज्य व्यापार और वाणिज्य बढ़ना शुरू हुआ वैसे-2 एक ऐसी कानूनी रूपरेखा की आवश्यकता महसूस होने लगी जो इस प्रवाह को रोकने के बजाय तेज करने के लिए सहायक हो।

जब योजना आयोग अस्तित्व में था, उस समय दक्षिणी राज्य की अक्सर यह आपत्ति रहती थी कि निधि आबंटन में उनके साथ पक्षपात किया जाता है। विशाल केन्द्रीय योजनाएं विवाद का एक अन्य कारण बनीं और इसमें योजनाओं की ब्रान्डिंग एक बड़ा मुद्दा था। जब केन्द्रीय बजट का आकार बढ़ता रहा। तब सामान्य नागरिकों के जीवन को छूने वाली योजनाओं का आकार बढ़ाया गया। चुनावी मजबूरियों के कारण श्रेष्ठ परिवर्तनवादी योजनाओं का भी बुनियादी मुद्दों पर विरोध हो सकता है - जैसे प्रधानमंत्री जन-धन योजना के नाम पर प्रधानमंत्री - मुख्यमंत्री जन-धन योजना क्यों न कहा जाए ?

1989 से संघ सरकारों में गठबंधन की राजनीति देख सकते हैं 1989 से 2014 तक किसी भी एक दल का पूर्ण बहुमत न होने के कारण गठबंधन की लचीली सरकारों का निर्माण हुआ और शक्तियों का व्यापक रूप में विकेन्द्रीयकरण अब इस दौर में क्षेत्रीय दलों के गठबंधन से सरकारों का निर्माण से पहले अपने-अपने राज्यों व क्षेत्रों के विशेष महत्व प्रदान करने लगे। अनुदानों की मांगें बढ़ने लगीं। तथा क्षेत्रवाद का काफी बोल-बाला बना रहा यह भारतीय संघ के लिए कुछ परिवर्तन के तौर पर देख सकते थे। इसमें क्षेत्र व स्थानीय स्तरों की निकायों का महत्व बढ़ने लगा। जिससे भारतीय संघ में न्यायपालिका की भूमिका को सक्रिय बना दिया गया इस दौर में भारतीय संघ व सरकार के तीनों अंग कार्यपालिका, विधानपालिका व न्यायपालिका के अधिकार क्षेत्रों में भी अभूतपूर्व परिवर्तन देखा जा सकता है राज्य सरकारों का महत्व संघ सरकारों पर व्यापक प्रभाव देखा जा सकता है लेकिन 2014 के आम चुनाव ने संघ में पूर्ण बहुमत पूर्ण सरकार प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में गठित हुई। वैसे ही समस्याएं उभरना शुरू हो गईं आंतरिक व्यापार और वाणिज्य व्यापार को प्रभावित करने वाली अत्यंत जटिल संरचनाओं के परिणामस्वरूप सरलीकरण की मांगें निरंतर रूप से उठने लगीं। लेकिन जी.एस.टी. को आने में देरी होने की चिंता स्पष्ट हुई है सैद्धान्तिक दृष्टि से सहकारी संघवाद अच्छा लगता है। वर्तमान सरकार ने नीति आयोग की

बैठकों के दौरान टीम इंडिया जैसे शब्दों के इस्तेमाल या सर्व समावेशी जी.एस.टी. परिषद के निर्माण इत्यादि जैसे सरल संकेतों के माध्यम से उल्लेखनीय समझदारी का परिचय दिया है। वित्त आयोग ने भी अपनी 14 वीं रिपोर्ट में सिफारिस की है कि राज्यों को केन्द्रीय कर राजस्व संग्रहण में 10 प्रतिशत बढ़ोतरी की सिफारिश संघ सरकार से की गई थी।

भारतीय संघ का इतिहास देखे तो पता चलता है कि मन्त्रीमण्डल के प्रस्ताव पर स्थापित योजना आयोग वित्त आयोग से ज्यादा शक्तिशाली भूमिका में था वित्त आयोग भारतीय संविधान की धारा 280 के तहत स्थापित किया जाता है लेकिन इसके कार्यों पर योजना आयोग की सिफारिस हावी रहती थी जिसके चलते प्रधानमंत्री ने लाल किले से संबोधन में एक नए आयोग के स्थापित करने व योजना आयोग को निरस्त किया गया। और भारत को सहकारी संघ में बदलने के प्रयास दिखाई दे रहे हैं।

सहकारी संघवाद की और बढ़ते कदम - नीति आयोग की बैठक में जिस सहकारी संघवाद की बात निकली वास्तविक रूप से वो केन्द्र और राज्यों के बीच सम्बंध को मजबूत करने की कड़ी है।

15 मार्च 1950 में बने योजना आयोग के स्थान पर 1 जनवरी 2015 को नीति आयोग का गठन किया गया है। नीति आयोग के गठन के साथ ही 65 सालों से चली आ रही योजना आयोग का अस्तित्व खत्म हो गया है। वास्तव में योजना आयोग अपने उद्देश्य में पूरी तरह कभी सफल नहीं हो पाया केन्द्र और राज्य सरकारों के बीच इसे लेकर कई तरह के मतभेद रहे हैं। केन्द्र और राज्यों के अंश को लेकर भी अनेकानेक बार दोनों पक्षों के बीच टकराव हुआ। कई राज्यों के द्वारा ये भी कहा गया कि योजना आयोग ने 65 वर्ष के कार्यकाल में केवल 12 पंचवर्षीय योजना और 60 वार्षिक योजनाओं के बनाने के अतिरिक्त कुछ नहीं किया।

केन्द्र में सत्ता में आई नरेन्द्र मोदी की सरकार ने राज्यों की समस्याओं को भली भाँति समझते हुए योजना आयोग के स्थान पर नीति आयोग का गठन किया। गठन के बाद अपने सम्बोधन में प्रधानमंत्री ने सहकारी संघवाद की बात कही। अपने इस लेख के माध्यम से मैं आपको इस सहकारी संघवाद के सम्बंध से अवगत कराना चाहता हूँ। नीति आयोग जन-केन्द्रित, सक्रिय और सहभागी विकास एजेंडा के सिद्धान्त पर आधारित है बदलते माहौल और बदलती आवश्यकताओं के लिए एक ऐसे संस्थान के गठन की आवश्यकता थी जो थिंक

टैंक के रूप में काम कर सके। चूंकि हमारे प्रधानमंत्री पहले गुजरात जैसे बड़े राज्य के मुख्यमंत्री के तौर पर तीन कार्यकाल काम कर चुके थे। इसलिए योजना आयोग से राज्यों को लेकर होने वाली परेशानियों से वो भली-भाँति परिचित थे। जैसे बात करें तो पहले योजना आयोग में राज्य सरकारों की कोई भूमिका नहीं होती थी। लेकिन संघीय ढांचे को मजबूत करते हुए नीति आयोग में सभी राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों की भागीदारी सुनिश्चित की गई है।

केन्द्र से राज्यों की तरफ चलने वाले एक पक्षीय नीतिगत क्रम को एक महत्वपूर्ण विकासवादी परिवर्तन के रूप में राज्यों की वास्तविक और सत्त भागीदारी में बदल दिया जायेगा। यही वास्तविक सहकारी संघवाद होगा। योजना आयोग को देश के हितों की योजना बनाने का दायित्व था पर बीते सालों में 200 लाख करोड़ रुपये के आवंटन के बाद भी वो ऐसा करने में अधिक सफल नहीं हो पाया। रोजगार पैदा करने वाले संसाधनों की तलाश में भी आयोग विफल रहा। पूरे संगठित क्षेत्र में सिर्फ 9 प्रतिशत रोजगार सृजित हो पाया। देश के अनेक राज्य केन्द्र से बेहतर काम करते रहे हैं और राजकोषीय घाटा को कम करने में उनका प्रदर्शन बेहतर रहा है।

नीति आयोग के गठन से राज्यों को ज्यादा प्राथमिकता तथा नितिगत फैसलों में भाग ले सके व अपने विकास में आ रही बाधाओं से निपटने में केन्द्र से सहायता प्राप्त करने में भी अमल कर सके। इसका मुख्य उद्देश्य आर्थिक नीतियों में सकारात्मक परिणामों और राज्यों को अधिक से अधिक वित्तीय सहायता प्रदान कर सके। नीति आयोग आर्थिक विकास के लिए राज्यों के साथ मिलजुल कर कार्य करेगा। राज्यों के विकास में आने वाली बाधाओं को दूर करने के यंत्र की भूमिका में कार्य कर सकेगा राज्यों को उनकी प्रत्येक मूलभूत आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर कार्य करेगा।

भारतीय संघ के ज्वलंत मुद्दे:-

अनुच्छेद 356 व राष्ट्रपति शासन - भारतीय संघ का सबसे ज्वलंत मुद्दा राज्यपाल की भूमिका व अनुच्छेद 356 का प्रयोग, जिससे हम राष्ट्रपति शासन के नाम से भी जानते हैं अब तक इसका प्रयोग लग-भग सवा सौ बार हो चुका है लेकिन संघ सरकारों ने इसका दुरुपयोग किया गया है। बहुत ही कम इसका शुद्ध उपयोग किया है पिछले वर्ष भी भाजपा सरकार ने दो राज्यों की विधानसभाओं को भंग किया तो सर्वोच्च न्यायालय ने उनको पुनः जीवित किया।

अलगाववाद व नक्सलवाद का मुद्दा:-

अलगाववाद भारतीय संघ में एक ज्वलंत मुद्दा अलगाववाद भी है जम्मूकश्मीर, प. बंगाल, व दक्षिण भारत के अधिकतर राज्य भारतीय संघ से अलग होने का दावा करते हैं इस का आरम्भ 1967 से नक्सलवादियों द्वारा पूरे जोर शोर से उठाया गया है जो संगठन वर्तमान में भी भारतीय एकता, अखण्डता पर प्रहार कर रहे देश में अशान्ति का माहौल पैदा करना चाहते हैं।

बढ़ता क्षेत्रवाद का मुद्दा:-

क्षेत्रवाद का बढ़ता प्रभाव भी जिससे केन्द्रीय सरकार कम जोर तथा क्षेत्रीय सरकार क्षेत्रवाद को बढ़ावा देती है कुछ हद तक तो शक्ति का विकेन्द्रीयकरण ठीक है लेकिन नागरिकों के मन में राष्ट्रवाद से क्षेत्रवाद की भावना राष्ट्रीय एकता अखण्डता के लिए ठीक नहीं।

राज्यों में गरीबी व भूखमरी का मुद्दा:-

भारत के स्वतंत्र हुये सात दशक से भी ज्यादा हो चुके हैं गरीब व भूखमरी की समस्या का निदान नहीं हो चुका है। ऐसी स्थिति में उन व्यक्तियों को राज्य, सरकार राष्ट्रीय एकता, अखण्डता से क्या वास्ता रह जाता है इस हालात में वे आंतकवादी व अलगाववादी संगठनों में रुपये, पैसे या अपना पेट भरने के लिए शामिल हो जाते हैं।

वित्तीय भेदभाव का मुद्दा:-

राज्यों को अपनी वित्तीय आवश्यकता के आधार पर भी केन्द्रीय सरकारों में भेदभाव देखने को मिलता है संघ में अलग पार्टी की सरकार व राज्यों में अलग पार्टी की सरकार होने पर राज्य सरकारों द्वारा संघ सरकार को घेरा है जो वर्तमान में भी ऐसे मुद्दे देखने को मिले हैं।

केन्द्रीयकरण का मुद्दा:-

केन्द्रीयकृत संघ - लगभग दो दशकों तक (1950-1967) जितने भी चुनाव हुए थे उन सभी चुनावों में भारतीय जनता का समर्थन कांग्रेस को प्राप्त था जिसके परिणाम स्वरूप केन्द्र व राज्य दोनों स्थानीय स्तर पर भी कांग्रेस की सरकार स्थापित होती थी कांग्रेस पार्टी में हमेशा केन्द्रीय नेतृत्व को प्रमुखता दी गई थी।

भारतीय संविधान में केन्द्र राज्य के मध्य सम्बंध:-

भारतीय संविधान के भाग ग्यारह में केन्द्र-राज्य सम्बंधों का विस्तार और स्पष्टता से वर्णन किया गया है।

विधार्थी सम्बंध:-

- भारतीय संविधान में संघ व राज्यों के बीच विधायी सम्बंधों का अनुच्छेद 245 से 255 के अंतर्गत किया गया है।

प्रशासनिक सम्बंध:-

- भारतीय संविधान के भाग ग्यारह के द्वितीय अध्याय के अनुच्छेद 256 से 263 तक के अंतर्गत संघ व राज्यों के मध्य प्रशासनिक संबंधों का प्रावधान किया गया है।

वित्तीय सम्बंध:-

- संघ व राज्यों के वित्तीय सम्बंधों का भाग 12 के प्रथम अध्याय के अनुच्छेद 264 से 291 के बीच वर्णन किया गया है।

निष्कर्ष:-

शुरुआती दौर में जहाँ भारतीय संघ केन्द्रीयकृत था लेकिन 1967 के बाद इसका विकेन्द्रीयकरण हो गया फिर जनता सरकार द्वारा सहकारी संघ की तरफ भारतीय संघ के कदम बढ़े 1991 से भारतीय संघ पर भूमंडलीकरण व उदारीकरण का प्रभाव व गठबंधन सरकारों ने भारतीय संघ का अति विकेन्द्रीयकरण होने लगा वर्तमान समय का संघवाद का स्वरूप सहकारी संघ प्रावृति की ओर अग्रसर दिखाई देता है आज राज्यों को अलग-अलग नहीं किया जा सकता है सहकारी संघवाद व्यवहारिक रूप में तभी कायम किया जा सकता है जब राज्यों को निर्णात्मक भूमिका में महत्वपूर्ण स्थान दिया जाए। वर्तमान समय में टीम इंडिया, जी.एस.टी. नीति आयोग जैसे कदम इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में सहायक सिद्ध होंगे परन्तु राज्यों का भी यह कर्तव्य होना चाहिए कि वे भी सहकारी संघवाद को बढ़ाने में कदम के साथ कदम मिलाकर चले।

सन्दर्भ सूची:-

- ए.एस. नारंग, “भारतीय शासन और राजनीति” गीतानजली पब्लिसिंग हाऊस पृ. 74
- चैधरी नीरजा “मोदी प्रभाव विस्तार” दैनिक जागरण 2014
- डॉ. बीरकेश्वर प्रसाद सिंह, भारतीय शासन और राजनीति, पृ. 86
- कश्यप, सुभाष, दल-बदल व राज्य की राजनीति, श्री वाली प्रकाशन मेरठ 1970
- डॉ. बीरकेश्वर प्रसाद सिंह, भारतीय शासन और राजनीति, पृ. 205 ज्ञानदा प्रकाशन (पी. एण्ड. डी.) नई दिल्ली - 110002
- किरण टाईम्स, राजनीति विज्ञान, प्रकाशन डी. पी. सिंह, इलाबाद।
- नवीन कुमार अग्रवाल, भारत की राजनीतिक व्यवस्था, ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली 2017, पृ. 231-33
- डॉ. महेन्द्र प्रसाद सिंह “भारतीय शासन और राजनीति” प्रकाशक ओरियेंट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड. पृ. 133-35
- टार. पी. जोशी एवं आर.एस. आढा, भारतीय राजनीतिक व्यवस्था: पुनर्रचना के विविध आयाम, रावत पब्लिकेशन्स जयपुर, पृ. 53,55

Corresponding Author

Kapil Dev*

M.A, M.Phil, Net

kapildevpawaria@gmail.com